ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(4): 783-785
www.allresearchjournal.com
Received: 10-02-2016
Accepted: 18-03-2016

डॉ. अंजना रानी
एसोसिएट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र,
श्री गोविंद गुरु राजकीय
महाविद्यालय, बांसवाड़ा,
राजस्थान, भारत

Correspondence Author:
डॉ. अंजना रानी
एसोसिएट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र,
श्री गोविंद गुरु राजकीय
महाविद्यालय, बांसवाड़ा,
राजस्थान, भारत

लोकतंत्रः एक नैतिक मूल्य के रूप में

डॉ. अंजना रानी

सारांश
अब्राहम लिंकन की यह परिभाषा कि“ Democracy is for the people, of the people, by the people"., बचपन से सभी को सुनने पढ़ने को मिला है। लेकिन जीवन के अनुभव बताते हैं कि ऐसा लोकतंत्र हमें कहीं दिखाई नहीं देता। आखिर क्या बात है कि लोकतंत्र की बात करने वाले दूसरों के साथ व्यवहार में अलोकतांत्रिक हो जाते हैं। जनता दिनोंदिन बद से बदतर स्थिति में पहुंचती जा रही हैं और जनप्रतिनिधियों के ऐशो-आराम की जिंदगी सुर्खियों में छाई रहती हैं। जनता गरीबी रेखा के नीचे संख्या बढ़ा रही हैं और करोड़पति जनप्रतिनिधियों की संख्या संसद और विधायिकाओं में बढ़ती जा रही हैं। ऐसी विरोधाभासी स्थिति में लोकतंत्र को ठीक से समझना जरूरी है। लोकतंत्र के संप्रत्यय को समझने की दिशा में यह मेरा शोध लेख एक विनम्र प्रयास है।

कूट शब्दः लोकतंत्र, राजतंत्र, संप्रत्यय, विवेक।

प्रस्तावना
मेरी दृष्टि में “लोकतंत्र”शासन की एक प्रणाली मात्र ही नहीं, बल्कि एक मूल्यात्मक संप्रत्यय है। इस संप्रत्यय में निरंतर नए-नए आयाम जुड़ते गए हैं या कहें कि समय एवं परिस्थिति के अनुसार इसके भिन्न-भिन्न पक्ष उजागर होते गए हैं। इस रूप में इसे हम एक विकासमान-संप्रत्यय या गत्यात्मक-संप्रत्यय भी कह सकते हैं। अनेकानेक संभावनाएं इसके गर्भ में छुपी हुई हैं और कई बार स्वतंत्रता, समानता जैसे विरोधाभासी संप्रत्ययों को इसके साथ जोड़ दिया जाता है, जिससे यह कहना गलत नहीं होगा कि लोकतंत्र का एक निश्चित अर्थ बता देना या इसे परिभाषित कर देना अत्यधिक कठिन है।

क्योंकि यह संप्रत्यय कोई निश्चित अर्थ लिए हुए नहीं है, इसीलिए इस संप्रत्यय में तार्किक विसंगतियां खोजना मेरी राय में ठीक नहीं होगा।

तार्किक विसंगतियां उन्हीं संप्रत्ययों में खोजी जा सकती हैं, जिनके अर्थ निश्चित हों। जैसे कोई यदि कहे कि 2+ 2=5 होते हैं तो हम कहेंगे कि यह व्यक्ति या तो 2 का अर्थ नहीं समझता या + का; क्योंकि इनके अर्थ निश्चित हैं, लेकिन यही बात लोकतंत्र के संदर्भ में नहीं कही जा सकती।

हमारी समस्या यह है कि यदि कोई हमसे पूछे कि लोकतंत्र क्या है तो हम तथाकथित लोकतांत्रिक देशों की राज्य व्यवस्था की ओर संकेत कर देते हैं और इस तरह एक भ्रम की स्थिति पैदा कर देते हैं। आज स्थिति यह है कि प्रायः सभी देश स्वयं के लोकतांत्रिक होने का दावा कर दूसरे पर अलोकतांत्रिक होने का आरोप लगाते रहते हैं। इसलिए यह बहुत जरूरी हो गया है कि हम लोकतंत्र के आधारों, मानकों, आदर्शों, उसे व्यवहार में लाने के श्रेष्ठतम उपायों, व्यवहार में आने वाली कठिनाइयों, लोकतंत्र की चुनौतियों और उन चुनौतियों का मुकाबला कर सकने के तरीकों पर गंभीरतापूर्वक विचार करें। यद्यपि लोकतंत्र को परिभाषित करना कठिन है फिर भी हमें लोकतंत्र के आधारों, उसके आदर्शों पर एक सर्वमान्य समझ विकसित करनी होगी जिससे हम उसे एक मानक मानकर अपने व्यवहार का मूल्यांकन कर सकें।

मेरी दृष्टि में लोकतंत्र एक नैतिक मूल्य है। विद्वानों के साथ विचार-विमर्श ने मेरी इस धारणा को और दृढ़ किया है। उसका कारण यह है कि जब हम चाहें भारत के संदर्भ में, चाहें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लोकतांत्रिक राजनीतिक यथार्थ का विश्लेषण करते हैं या देख रहे होते हैं कि किस तरह लोकतांत्रिक मूल्यों-आदर्शों के साथ भद्दा मजाक किया जा रहा है या किया जा सकता है, तब ऐसी स्थितियों को ध्यान में रखते हुए कई विद्वानों ने लोकतंत्र से पार जाने की बातें कहीं लेकिन उल्लेखनीय तथ्य, जिसने मेरा ध्यान आकर्षित किया वह यह कि उन्होंने beyond democracy में भी डेमोक्रेसी को ही तलाशा। जब वे रामराज्य की बात करने लगे या ऐसे राजतंत्रों की जहां राजा के लिए प्रजा का हित सर्वोपरि था। यह ध्यान देने की बात है कि जिन चिंतकों को प्रायः लोकतंत्र का विरोधी माना जाता रहा हैं, उनमें भी विद्वानों के द्वारा लोकतंत्रात्मक मूल्यों के बीज तलाशने की कोशिश की गई है। प्रोफेसर मधुकर श्याम चतुर्वेदी राजतंत्रात्मक शासन व्यवस्थाओं में भी लोकतंत्रात्मक मूल्यों के बीजों की ओर इशारा करते हैं। जब हम लोकतंत्र की मार्क्सवादी आलोचना पर बात कर रहे होते हैं, तब भी यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाता है कि किस तरह मार्क्स के लेखन और दर्शन में छुपे लोकतंत्रात्मक मूल्यों को अनदेखा किया गया है। प्रोफेसर राजीव गुप्ता तो मार्क्स के दर्शन को सही अर्थों में जनवादी-लोकतंत्र मानते हैं। इन विचार-विमर्श के आलोक में मेरे लिए यह निष्कर्ष सहज हो गया है कि लोकतंत्र आज के समय में सर्वमान्य नैतिक मूल्य है,जिसे लेकर किसी को कोई आपत्ति नहीं है। आपत्ति केवल उन पद्धतियों और प्रणालियों को लेकर हैं जो इसे व्यवहार में लाने के लिए काम में ली गई हैं। ऐसी स्थिति में लोकतंत्र की एक गहरी और व्यापक समझ विकसित करना और भी आवश्यक हो गया है ताकि लोग अपने-अपने पक्ष में अपने-अपने तरीके से इसे व्याख्यायित न कर सकें।

अब प्रश्न है कि क्यों लोकतंत्र एक मूल्य है? हमारे पास कोई तो आधार होना चाहिए जो लोकतंत्र को मूल्य के रूप में प्रतिष्ठापित करने की सामर्थ्य रखता हो। यह स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है कि मूल्यों की बात व्यक्ति के संदर्भ में ही की जाती हैं और लोकतंत्र वह मूल्य है, जिसका आधार है - व्यक्ति की गरिमा और आदर्श तथा उसका सर्वांगीण विकास। यहां जिस व्यक्ति की बात की जा रही है,वह अपने ही जैसे अन्य व्यक्तियों से जुड़ा हुआ एक सामाजिक प्राणी है; क्योंकि किन्ही भी मूल्यों और आदर्शों की बात सार्थक रूप से समाज में रहने वाले व्यक्तियों के लिए ही की जा सकती है। यहां एक बात जो समझ लेनी आवश्यक है, वह यह कि आधार और आदर्श ये दो भिन्न चीजें हैं। हमें इन दोनों को एक नहीं कर देना चाहिए। आधार वह नींव है, जिस पर भवन खड़ा किया जाता है और आदर्श उस भवन का बाह्य सौंदर्य। कितना ही सौंदर्यसंपन्न भवन क्यों न हो,

कोई आधार न होने पर धराशायी हो ही जाएगा। ठीक इसी परिप्रेक्ष्य में हम पूंजीवाद और साम्यवाद के व्यावहारिक रूपों को समझ सकते हैं जो क्रमशः स्वतंत्रता और समानता के सुंदर आदर्शों का दंभ भरते थे लेकिन क्योंकि वह मानव मात्र की गरिमा के अपने आधार से च्युत हो गए, अतः उन्हें लोकतंत्रवादी नहीं कहा जा सकता; चाहे वे अपने आप को लोकतंत्रवादी सिद्ध करने के कितने ही प्रयास क्यों न करें। आधारहीन खोखले आदर्शों से अधिक समय तक लोगों को बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता।

व्यक्ति मात्र की गरिमा को लोकतंत्र का आधार स्वीकार कर लेने पर सवाल उठता है कि ऐसा क्या है जो व्यक्ति को गरिमावान बनाता है? निश्चय ही उसका विशिष्ट जैविक संगठन उसे गरिमामय नहीं बना सकता। तब विवेक ही वह तत्व है जो उसे गरिमामय बनाता है। मेरी दृष्टि में मनुष्य जन्म से न बुरा होता है (जैसा हॉब्स का मानना है) और न अच्छा (जैसा गांधी का मानना है). अरस्तू ने कहा था "मानव एक बौद्धिक पशु है" (Man is a rational animal) अर्थात् उसमें पाशविक वृतियां भी हैं और प्रायः उसका जीवन उसी से संचालित भी होता है; लेकिन साथ ही उसमें विवेक है, जो उसे इन पाशविक वृतियों से ऊपर उठकर उच्चत्तर मूल्य आधारित जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है। यही कारण है कि अन्य प्राणियों से भिन्न व्यक्ति की गरिमा की हम बात करते हैं। यह विवेक और अंतश्चेतना ही उसे बाह्य जगत से जोड़ती है,जिसके बिना उसका अस्तित्व संभव नहीं।

लोकतंत्र के संदर्भ में यहां एक और बात स्पष्ट करना जरूरी है कि हमने मानव में अपने हित-अहित, शुभ-अशुभ, कर्तव्य-अकर्तव्य को समझने की क्षमता विद्यमान होती है; इस तथ्य को इस रूप में समझ लिया कि व्यक्ति- मात्र अपना हित-अहित, कर्तव्य-अकर्तव्य समझता है। समझ-सकना और समझना ये दो अलग-अलग बाते हैं और दोनों को एक मान लेने से गंभीर समस्याएं पैदा हुई हैं।

व्यक्ति का लोकतांत्रिक होना इस बात में निहित है कि वह कितना अपने स्वार्थों से ऊपर उठकर एक वस्तुपरक दृष्टिकोण जीवन में विकसित कर पाया है, क्योंकि ऐसी स्थिति में ही वह दूसरों के साथ वैसा व्यवहार कर पाएगा जो वह स्वयं अपने लिए चाहता है। मेरी दृष्टि में यही लोक का तंत्र है। ऐसे ही जीवन में आचरांग-आगम का वह सूत्र पल्लवित हो सकता है जिसमें कहा गया है कि – "किसी को मारो नहीं, किसी पर शासन न करो, किसी को गुलाम न बनाओ, किसी में भय पैदा न करो, किसी का अपमान न करो।" जीवन को ऐसी दिशा देने में समाज के जाग्रत प्रबुद्ध महापुरुषों की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती हैं, क्योंकि जो स्वयं जागा हुआ है, वही दूसरे को जगा सकता है। जो स्वयं गहन निद्रा में लीन हैं, वे कैसे दूसरों को जगा पाएंगे? ऐसे मानवीय संबंधों पर आधारित जो समाज-व्यवस्था या राज्य-व्यवस्था होगी, उसे ही सही अर्थों में लोकतांत्रिक समाज और लोकतांत्रिक राज्य कहा जा सकेगा। वही व्यवस्था लोकतांत्रिक कही जा सकती है, जिसमें व्यक्ति मात्र में अंतर्निहित अच्छाइयों के प्रस्फुटन के अवसर उपलब्ध रहते हों। सामाजिक-लोकतंत्र और राजनीतिक-लोकतंत्र तो रास्ते के पड़ाव हैं, ध्येय है लोकतांत्रिक-समाज और लोकतांत्रिक-राज्य।

संदर्भ

1. Maxey- political philosophies.
2. समाज दर्शन का परिचय-डॉ. शिव भानु सिंह.
3. आधुनिक हिंदी निबंध-ओपी मालवीय प्रयाग पुस्तक भवन.
4. आधुनिक राजनीतिक विचारों का इतिहास- ज्योति प्रसाद सूद
5. डॉ. एमसी जोशी-गांधी नेहरू टैगोर तथा अंबेडकर.
6. सत्य के साथ मेरे प्रयोग-महात्मा गांधी
7. आचरांग-आगम